अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

अथर्ववेद में वनस्पति का अनुशीलन

सुनील कुमार पाण्डेय
शोधार्थी, संस्कृत
डॉ0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय
अयोध्या (उ0प्र0)

शोध ग्रन्थ सार –

वेदों में वनस्पति–जगत् से संबद्ध सामग्री बहुत अधिक है। वेदों मे ओषधि शब्द का बहुत व्यापक अर्थ में प्रयोग हुआ है। ओषधि शब्द वनस्पति–जगत् का पर्याय है। ओषधियों के मुख्यरूप से दो भेद हैं – वनस्पति और ओषधि। वृक्षों के लिए वनस्पति शब्द हैं और छोटे पौधों के लिए ओषधि। बाद में ओषधि शब्द रोगनाशक या चिकित्सा के लिए उपयोगी वृक्षों के लिए प्रचलित हो गया है।

चारों वेदों और ब्राह्मणग्रन्थों आदि में वनस्पतिशास्त्र से संबंद्ध पर्याप्त सामग्री उपलब्ध होती है। इनमें वृक्ष–वनस्पतियों की उपयोगिता, इनका महत्त्व, वृक्ष–वनस्पतियों का वर्गीकरण, इनके उत्पत्तिस्थान, वृक्षों के लिए आवश्यक तत्त्व, इनका ओषधि के रूप में उपयोग, वृक्षादि में चेतनतत्त्व, मानवजीवन के लिए वृक्षादि की अनिवार्यता, वृक्ष–वनस्पतियों के लाभ आदि से संबद्ध सामग्री प्रचुर मात्रा में विद्यमान है। उसका ही विवेचन यहाँ अभीष्ट है।

वृक्ष–वनस्पतियों का उपयोगिता

ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद में वृक्ष–वनस्पतियों को उपयोगिता के विषय में विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। वृक्ष मानवमात्र को प्राणवायु (Oxygen) देते हैं, इसलिए वे मानव के रक्षक, पोषक और माता–पिता है। मनुष्य प्राणवायु के बिना जीवित नहीं रह सकता है, अतः वृक्ष, वन, वनस्पतियों और ओषधियों की रक्षक बताया गया है।

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

वृक्ष–वनस्पति केवल प्राणवायु के ही साधन नहीं है, अपितु उनका पंच–अंग अर्थात् पाँचों अंग उपयोगी हैं। ये पाँच अंग है – 1. मूल (जड़), 2. स्कन्ध, शाखा (तना और शाखाएँ), 3. पत्र (पत्ते), 4. पुष्प (फूल) और 5. फल। काष्ठ की प्राप्ति का एक मात्र साधन वृक्ष है। पत्ते, फूल और फल मानव जाति के आच्छादन, भरण–पोषण, भोज्यपदार्थ, रोगनाशन आदि के द्वारा मानव के लिए सुख–सुविधा के साधन है। ये वातावरण को शुद्ध करते हैं और प्राणिमात्र को आरोग्य प्रदान करते है।

ऋग्वेद में एक पूरा सूक्त ओषधिसूक्त है। यह सूक्त प्रायः पूरा यजुर्वेद में भी आया है। ऋग्वेद के 23 मंत्रों में ओषधियों का महत्त्व प्रतिपादन किया गया है। इस सूक्त में महत्त्वपूर्ण बातें ये कही गयी हैं :

वृक्ष, वनस्पति और ओषधियों की उत्पत्ति मानव–सृष्टि से बहुत पहले हुई है। यह ओषधियाँ देवों से भी तीन युग पहले उत्पन्न हुई हैं, (मंत्र 1)। ओषधियाँ संसार में सैकड़ों और सहस्त्रों स्थानों पर उत्पन्न होती है (मंत्र 2)। ओषधियाँ मानभाव के दुःख दूर करती है और उन्हें पार लगाती हैं, (मंत्र 3)। ओषधियाँ।

प्रस्तावना–

वैदिक साहित्य में वनस्पतियों की उपयोगिता का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। वृक्ष मानवमात्र को प्राणवायु (Oxygen) देते हैं, अतः वे मानव के रक्षक, पोषक और माता–पिता हैं। अतएव ऋग्वेद और यजुर्वेद में ओषधियों–वनस्पतियों को माता कहा गया है। वनस्पतियाँ मनुष्य को प्राणवायुरूपी जीवनी–शक्ति देती हैं, अतः उन्हें 'पुरुषजीवनी' कहा गया है।

वृक्ष–वनस्पति केवल प्राणवायु के ही साधन नहीं हैं, अपितु उनका पंच–अंग अर्थात् पाँचों अंग उपयोगी हैं। पाँच अंग ये हैं : 1. मूल (जड़), 2. स्कन्ध–शाखा (तना और शाखाएँ), 3. पत्र (पत्ते), 4. पुष्प (फूल), 5. फल। काष्ठ की प्राप्ति के एकमात्र साधन वृक्ष हैं। पत्ते, फूल और फल आच्छादन, भरण–पोषण, भोज्य पदार्थ, रोगनाशन

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

आदि के द्वारा मानव को अनेक प्रकार की सुख–सुविधाएँ प्रदान करते हैं। यजुर्वेद में वनस्पतियों को पर्यावरण का शोधक एवं प्रदूषणनाशक बताते हुए 'शमिता' कहा गया है। इसका अभिप्राय है कि वृक्षादि प्रदूषण को नष्ट करके वातावरण को शुद्ध करते हैं।

ऋग्वेद में एक पूरा सूक्त ओषधि सूक्त है। यह पूरा सूक्त कुछ विस्तार के साथ यजुर्वेद में भी आया है। ऋग्वेद के 23 मंत्रों में ओषधियों के महत्त्व का विस्तार से प्रतिपादन किया गया है। इसमें कुछ महत्त्वपूर्ण बातें ये कही गई हैं

1. ओषधियाँ की उत्पत्ति मानव–सृष्टि से बहुत पहले हुई है। ये ओषधियाँ देवों से भी तीन युग पहले हुई हैं। (मंत्र 1)
2. ओषधियाँ मनुष्य के दुःख दूर करती हैं और उन्हें पार लगाती हैं। (मंत्र 3)
3. ओषधियाँ माता की तरह मानव की रक्षा करती हैं, अतः इन्हें 'मातरः' (माता) कहा गया है। (मंत्र 4)
4. ओषधियाँ विविध रोगों (अमीव) और प्रदूषण (रक्षस्) को नष्ट करती हैं। ऐसी ओषधियों के संग्रहकर्ता को वैद्य (भिषक्) कहते हैं। (मंत्र 6)
5. ओषधियाँ पशु–जगत् को शक्ति प्रदान करती हैं और उनकी सुरक्षा करती हैं। (मंत्र 8)
6. ओषधियाँ शरीर के दोषों को निकालती हैं (निष्कृति) और चोट, घाव, शरीर की टूट–फूट आदि को ठीक करती हैं (इष्कृति)। (मंत्र 9)
7. ओषधियाँ शरीर की निर्बलता दूर करती हैं और रोगों का निवारण करती है।
8. ओषधियाँ शरीर के समूल नष्ट करती हैं। अतः यह कहा जाता है कि 'रोग की आत्मा हो नष्ट हो जाती हैं'। (मंत्र 11)

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

9. ओषधियाँ शरीर के प्रत्येक अंग–प्रत्यंग में अपना प्रभाव पहुँचाती हैं और सारे रोगों को निर्दयतापूर्वक बाहर निकालती हैं। (मंत्र 12)

10. ओषधियाँ रोग, शोक, मय शाप और मृत्यु के बन्धन से छुड़ाती हैं। (मंत्र 16)

11. ओषधियों में दिव्य शक्ति है। जो इनकी शरण में आता है या जो इन्हें अपना लेता है, वह कभी नहीं होती। (मंत्र 17)

12. ओषधियाँ मनुष्य (द्विपाद्) और पशु (चतुष्पाद) सबको नीरोगता प्रदान करती हैं। (मंत्र 20)

13. ओषधियाँ शरीर के सामर्थ्य को अक्षुण्ण बनाए रखती हैं, शक्ति देती हैं और रोग–शोक दुःख आदि से पार लगाती है। (मंत्र 21,22)

वनस्पतियों का महत्त्व :

ऐतरेय और कौषीतकि ब्राह्मण से एक महत्त्वपूर्ण बात कही गई है कि वनस्पतियाँ मानव–जगत् के प्राण हैं। वनस्पतियाँ प्राणिमात्र को प्राणशक्ति आक्सीजन (Oxygen) देती हैं, अतः वे संसार के प्राणरूप हैं। कौषीतकि ब्राह्मण में एक अन्य बात भी कही गई है कि वनस्पतियाँ परमात्मा का उग्र रूप हैं। इसका अभिप्राय यह है कि परमात्मा के दो रूप हैं : शिव और रुद्र। वृक्ष–वनस्पति भी उसी प्रकार शिव और रुद्र हैं। दूसरी ओर वे अपने रुद्र रूप के द्वारा रोग, रोगाणु, प्रदूषण आदि के संहारक हैं। यदि मानव वृक्ष–वनस्पतियों का संहार या नाश करता है तो प्राणशक्ति–प्रदाता वनस्पति के नाश में मानवसृष्टि का ही संहार हो जाएगा। आक्सीजन न मिलने से मनुष्य स्वयं नष्ट हो जाएगा। यह है वृक्षों का शिव और रुद्र रूप।

कौषीतकि ब्राह्मण में एक अन्य बात कहीं गई है कि वृक्ष अग्निरूप हैं, अर्थात् वृक्षों में आग्नेय तत्त्व के कारण ही वृक्षों में ऊष्मा है। वे अपना रस खींचते हैं, उसका परिपाक करते हैं, अतएव वृक्ष–वनस्पतियों में वृद्धि होती है। कौषीतकि ब्राह्मण में ही

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

यह भी कहा गया है कि वनस्पति उसको कहते हैं, जिसमें शक्तिवर्धन, शक्तिप्रदान और ऊर्जा देने की क्षमता हो। वनस्पतियाँ वस्तुतः शक्ति के स्त्रोत हैं, अतः उन्हें 'पयोभाजन' अर्थात् दुग्धवत् शक्ति के स्त्रोत कहा गया है। ऋग्वेद और यजुर्वेद में ओषधियों को 'माता' कहकर यही भाव दिया गया है। जिस प्रकार माता अपने दूध से बालक का पालन करती है, इसी प्रकार वनस्पतियाँ प्राणिजगत् को शक्ति देकर उनका पालन करती हैं।

यजुर्वेद और शतपथ ब्राह्मण में 'ओषधयो मुदः' कहकर वनस्पतियों को जीव–जगत् को आनन्द, प्रसÂता, उल्लास और प्रमोद देने वाला कहा गया है। वृक्ष–वनस्पतियाँ न हों तो अÂ& पान न मिलने के कारण मनुष्य और पशु–पक्षियों की प्रसÂता ही समाप्त हो जाएगी।

ऋग्वेद में वृक्ष–वनस्पतियों के महत्त्व की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा गया है कि वृक्षों को न काटो, क्योंकि ये प्रदूषण को नष्ट करते हैं। यजुर्वेद में भी कहा गया है कि वृक्ष–वनस्पतियों को न काटें, उन्हें हानि न पहुँचावे। ऋग्वेद में वृक्ष–वनस्पतियों का एक विशेष लाभ यह बताया गया है कि ये जल के स्त्रोतों की रक्षा करते हैं, अतएव वृक्षों को लगावें। मंत्र में जल–स्त्रोत के लिए 'उत्स' शब्द लिया गया है।

यजुर्वेद में वृक्षों का एक लाभ यह भी बताया गया है कि वे वर्षा करने वाले बादलों को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं और पृथिवी को दृढ़ बनाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि अच्छी वृष्टि के लिए वृक्षों और वनों की अत्यन्त आवश्यक है।

वृक्ष–वनस्पतियों का एक अन्य महत्त्व यह बताया गया है कि ये विषनाशक हैं, प्रदूषण को नष्ट करते हैं। अथर्ववेद में अतएव कहा गया है कि ओषधियाँ 'विदूषणीः'

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

अर्थात् प्रदूषण को नष्ट करती हैं। ये विषरूप कार्बन–डाइआक्साइड को आत्मसात् कर लेती हैं।

ओषधि का अर्थ

वैदिक साहित्य में ओषधि शब्द समस्त वनस्पति–जगत् के लिए प्रयुक्त हुआ है। ओषधि शब्द की सामान्य व्याख्या है : 'ओषधयः फलपाकान्ताः' अर्थात् जिनके फल पकते हैं। परिपक्व होने पर इनके फल काट या तोड़ लिए जाते हैं। ओषधि शब्द की कई प्रकार से व्याख्या की गई है। शतपथ ब्राह्मण में ओषधि की व्याख्या की गई है कि 'ओर्ष धय' अर्थात् जो ओष या दोष को पी लेती है या नष्ट कर देती है, अतः इन्हें 'ओषधि' कहा जाता है।

आचार्य यास्क ने ओषधि की निरुक्ति दी है कि जो शरीर में ऊष्मा या ऊर्जा उत्पन्न करके उसे धारण करती है, या जो दोष–प्रदूषण आदि को नष्ट करती है। सायण ने इसकी व्युत्पत्ति दी है 'ओषः पाकः फलपाकः यासु धीयते इति ओषधयः' अर्थात् जिनके फल पकते हैं, उन्हें ओषधि कहते हैं। इस प्रकार ओषधि के दो अर्थ मुख्यरूप से ज्ञात होते हैं : 1. जिनके फल पकते हैं, 2. जो दोषों एवं प्रदूषण आदि को नष्ट करती हैं।

ओषधियों के भेद

ओषधियों के मुख्य रूप से दो भेद हैं : 1.वनस्पति, 2. ओषधि। वृक्षों के लिए वनस्पति शब्द हैं और छोटे पौधों के लिए ओषधि शब्द। ऋग्वेद में वृक्ष–वनस्पति के लिए 'वनिन्' शब्द भी आता है। वनस्पति के भी दो भेद किए गए हैं : 1. वनस्पति, 2. वानस्पत्य' शब्द। इसी प्रकार ओषधि के भी दो भेद हैं : 1. ओषधि, 2.वीरुध्। छोटे पौधे के रूप में होने वाले को 'ओषधि' (Herbs) और लता, गुल्म (झाड़ी) आदि के रूप में होने वाले की 'वीरुध्' (वीरुत्, Creepers) कहते हैं। इस प्रकार ओषधि के चार भेद हो जाते हैं। अथर्ववेद में इन चार भेदों का उल्लेख है। अथर्ववेद में ओषधि और

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

वीरुध् के साथ तृण (Grass) का भी उल्लेख है। इस प्रकार ओषधियों के चार के स्थान पर पाँच भेद हो जाते हैं।

अथर्ववेद के एक मंत्र में वीरुध् का व्यापक अर्थ में प्रयोग करते हुए उसके पाँच राज्यों (प्रमुख वर्गो) का वर्णन है। ये हैं : 1. सोम (सोमलता), 2. दर्भ (कुश), 3.भंग (भाँग), 4. यव (जौ), 5. सहस् (शक्तिवर्धक चावल)।

ओषधियों का वर्गीकरण

वेदों में वृक्ष–वनस्पतियों (ओषधियों) के रंग, स्वरूप, गुण–धर्म एवं फल आदि के आधार पर भी वर्गीकरण किए गए हैं। जैसे,

1. रंग के आधार पर : यह वर्गीकरण पौधों के रंग के आधार पर किया गया है। (क) बभ्रु (भूरे रंग वाली), (ख) शुक्र (सफेद रंग की), (ग) रोहिणी (लाल रंग की), (घ) पृश्नि (चितकबरी), (ड.) असिक्नी (श्याम वर्ण की), (च) कृष्णा (काले रंग की)।

2. स्वरूप या आकार–प्रकार के आधार पर : (क) प्रस्तृणती (चारों ओर फैलने वाली), (ख) स्तम्बिनी (गुच्छों वाली या झाड़ीदार), (ग) एकशुंगा (एक खोल वाली, जिसके एक खोल के अन्दर बहुत से फूलों आदि के गुच्छे भरे हों), (घ) प्रतन्वती (बहुत फैलने वाली, जो लंबाई में बहुत दूर तक फैले), (ड.) अंशुमती (जिसमें से अनेक छोटे–छोटे रेशे या किल्ले फूटते हों), (च) काण्डिनी (पौरुओं वाली), (छ) विशाखा (अनेक शाखाओं वाली)।

3. गुण–धर्म के आधार पर : अथर्ववेद में गुण–धर्म के आधार पर यह वर्गीकरण दिया है : (क) जीवला, जीवन्ती (जीवनदायिनी, आयुवर्धक), (ख) नघारिया (हानि न करने वाली), (ग) अरुन्धती (मर्मस्थल या घावों को भरने वाली), (घ) उन्न्यन्ती (उन्नत करने वाली, शक्तिप्रद), (ड.) मधुमती (मधुर, कोठी), (च) प्रचेतस् (चेतना देने वाली), (छ) मेदिनी (पुष्टिकारक, मोटापा देने वाली), (ज) उग्रा (तीव्र या तीक्ष्ण प्रभाव वाली),

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

(झ) बलास–नाशनी (कफनाशक या कैंसर को नष्ट करने वाली), (ञ) कृत्यादूषणी (अभिचार या जादू–टोने आदि के प्रभाव को नष्ट करने वाली)।

ऋग्वेद और यजुर्वेद में इसी प्रकार का अन्य वर्गीकरण दिया है : (क) अश्वावती (अश्वशक्ति देने वाली या वीर्यवर्धक), (ख) सोमवती (सोम्यगुण देने वाली या क्रोध आदि उग्रता को दूर करने वाली), (ग) ऊर्जयन्ती (ऊर्जा देने वाली), (घ) उदोजस् (ओजस् या कान्ति देने वाली), (ड.) उच्छुष्मा (तुरन्त ताकत देने वाली या अधिक ऊर्जा देने वाली)।

4. फल आदि के आधार पर : (क) पुष्पवती (फूलों वाली), (ख) प्रसूमती (कली या अंकुरों वाली), (ग) फलिनी (फल वाली), (घ) अफला (बिना फलों वाली)। ऋग्वेद और यजुर्वेद में इसी के लिए ये नाम आए हैं : फलिनी (फल वाली), अफला (बिना फलों वाली), अपुष्पा (फलरहित), पुष्पिणी (फूल वाली)।

अथर्ववेद के एक मंत्र में वृक्षों के मूल (जड़), अग्र (अग्रभाग), मध्य (मध्यभाग), पर्ण (पत्ता) और पुष्प (फूल) का उल्लेख है और इनके मधुर होने का वर्ण है। यजुर्वेद के एक मंत्र में वृक्ष–वनस्पतियों के मूल, शाखा, पुष्प और फल का उल्लेख है।

ओषधियों के उत्पत्ति–स्थान आदि

वेदों में वृक्ष–वनस्पतियों (ओषधियों) के उत्पत्ति–स्थानों आदि का भी उल्लेख मिलता है। जैसे :

1. कुछ ओषधियाँ पर्वतों पर होती हैं। वहाँ से लाई जाती हैं।
2. अनेक ओषधियाँ पर्वतों और समतल भूमि दोनों जगह होती हैं।
3. कुछ ओषधियाँ शैवाल (अवक, काई) में उत्पन्न होती हैं।
4. कुछ ओषधियाँ नदी–तालाबों आदि के जल में होती हैं।
5. कुछ ओषधियाँ समुद्र के अन्दर होती हैं। गोताखोर गहरे समुद्र

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

के अन्दर से इन ओषधियों को निकालते हैं।

6. कुछ ओषधियाँ भूमि से खोदकर निकाली जाती हैं।

7. कुछ ओषधियाँ खनिज के रूप में हैं, ये भूगर्भ से निकाली जाती हैं।

8. कुछ प्राणिज हैं, जो जीवों के सींग आदि से प्राप्त की जाती हैं।

9. कुछ ओषधियाँ प्राकृतिक तत्त्वों से भी प्राप्त होती हैं। कुछ प्राकृतिक तत्त्व सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, जल एवं पृथिवी स्वयं ओषधिरूप हैं और ये विभिन्न रोगों को दूर, करते हैं। इनके आधार पर ही सूर्याकिरण–चिकित्सा, वायु–चिकित्सा, जल–चिकित्सा, मृत्–चिकित्सा आदि का वेदों में विस्तृत वर्णन मिलता है।

विभिन्न ओषधियाँ इन रूपों में प्राप्त होती हैं :

1. प्राकृतिक ओषधियाँ : सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि, जल, मिट्टी आदि। इनके आधार पर प्राकृतिक चिकित्सा विकसित हुई है। सूर्याकिरण–चिकित्सा आदि।

2. उद्भिज्ज या औद्भिद : पृथिवी को फाड़कर निकलने वाली वृक्ष–वनस्पति, ओषधि, लता, गुल्म आदि। अधिकांश ओषधियाँ इसी विधि से प्राप्य हैं।

3. खनिज द्रव्य : अंजन, सुवर्ण, रजत, सीसा आदि। सुवर्ण आदि के भस्म एवं अन्य रसायन आदि बनते हैं।

4. प्राणिज द्रव्य : मृग के सींग आदि का भस्म के रूप में प्रयोग।

5. समुद्रज या समुद्रिय : शेख, मुक्ता आदि। इनका भी भस्म, रसायन आदि के रूप के प्रयोग।

ऋग्वेद और यजुर्वेद में कहा गया है कि ओषधियों और वनस्पतियों के उत्पत्ति–स्थान सैकड़ों ही नहीं, अपितु सहस्त्रों में हैं। इसका अभिप्राय है कि संसार

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

की छोटी से छोटी और बड़ी से बड़ी सभी वस्तुओं का ओषधि के रूप में प्रयोग संभव है। अतएव उनके उत्पतिस्थान सहस्त्रों में हैं।

वृक्षों में अवितत्त्व (Chlorophyll) : अथर्ववेद में एक महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक तथ्य का उल्लेख है कि वृक्षों में हरियाली का कारण अवितत्त्व है। मंत्र में Chlorphyll (क्लोरोफिल) के लिए 'अवि' (रक्षक तत्त्व) शब्द का प्रयोग है। 'अवि है शब्द अव् (रक्षा करना) से बना है, अतः जीवन–दायक तत्त्व को 'अवि' नाम दिया गया है। मंत्र में कहा गया है कि अवितत्त्व ऋत (Tissues) से घिरा हुआ है। इसके कारण ही वृक्ष–वनस्पतियाँ हरे हैं।

वृक्ष–वनस्पतियाँ शिव के रूप : शतपथब्राह्मण में उल्लेख है कि वृक्ष–वनस्पतियाँ (ओषधियाँ) पशुपति अर्थात् शिव के रूप हैं। यजुर्वेद के रुद्राध्याय (अध्याय 16) में शिव को वृक्ष, वनस्पति, वन, ओषधि और लता–गुल्म (झाड़ी) का स्वामी बताया गया है। शिव को शिव या शंकर, इसलिए कहा गया है कि वे विष का पान करते हैं और अमृत प्रदान करते हैं। वृक्ष–वनस्पतियों का शिवत्व यह है कि वे कार्बन डाईआक्साइड (CO_2) रूपी विष को पीते हैं और आक्सीजन (O_2) रूपी अमृत (प्राणवायु) को छोड़ते हैं। इस प्रकार वृक्ष–वनस्पति शिव के प्रतीक या मूर्तरूप हैं।

वृक्षों में चेतन तत्त्व : वृक्षों में चेतना या चेतन तत्त्व है या नहीं, यह अत्यन्त विवादास्पद विषय है। कुछ विद्वान् वृक्षों में जीव मानते हैं, कुछ नहीं। न मानने वालों का कथन है कि वृक्षों में रासायनिक प्रक्रिया से सब काम होते हैं, उनमें चेतना या जीव नहीं है। अन्य विद्वान् मानते हैं कि वृक्षों में जीव या चेतन तत्त्व है और उनमें मनुष्य के तुल्य प्राण–संचार, रोना, हँसना, सोना–जागना आदि क्रियाएँ होती हैं। वेदों आदि से प्राप्त विवरण से ज्ञात होता है कि वृक्ष–वनस्पति न पूर्णरूप से निर्जीव या अचेतन। अपितु इनकी स्थिति मध्यगत है। इनमें मानव को तुल्य चिन्तन–मनन की शक्ति नहीं है। ये अपने कर्तव्य का निर्धारण नहीं कर सकते हैं। ये स्वेच्छा से

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

चल–फिर नहीं सकते हैं और न ग्राह्य–अग्राह्य का निर्णय कर सकते हैं। ये मानव की जाग्रत् अवस्था के तुल्य कार्य करने में असमर्थ हैं। दूसरी ओर ये पृथिवी से रस लेते हैं, इनमें प्रकाश–संश्लेषण (Photosynthesis) की क्रिया होती है। कुछ वृक्ष छूने से मुरझा जाते हैं। कुछ जीव–जन्तुओं या कीट आदि को पकड़कर चूस लेते हैं। इनमें सोने–जागने की क्रिया होती है। कुछ लता आदि (जैसे अंगूर की बेल) कुछ मास सुषुप्तावस्था या अचेतन अवस्था में रहते हैं और कुछ मास सक्रिय या चेतन। अतः वृक्ष–वनस्पतियों की दोनों स्थितियाँ देखने से ज्ञात होते है कि इनकी स्थिति मध्यगत है, न पूर्णतया सजीव और न पूर्णतया निर्जीव। चेतना की दृष्टि से इनकी स्वप्नावस्था वाली स्थिति मानी जा सकती है। ये अविकसित चेतन–तत्त्व वाले पदार्थों के प्रतीक हैं।

वेदों में प्राप्य कतिपय तथ्य यहा प्रस्तुत किए जा रहे हैं :

1. **वृक्ष–वनस्पति साँस लेते हैं :** अथर्ववेद का कथन है कि वृक्षादि में भी महान् ब्रह्म (आत्मा) की सत्ता है। अतः ये साँस लेते हैं।

2. **वृक्ष खड़े–खड़े सोते हैं :** अथर्ववेद के एक मंत्र में कहा गया है कि वृक्ष खड़े–खड़े सोते हैं।

3. **जीव वृक्षरूप में भी जन्म लेते हैं :** अथर्ववेद का कथन है कि जीव मरने के बाद ओषधियों (वृक्ष–वनस्पतियों) के रूप में भी पुनर्जन्म प्राप्त करता है।

4. **वृक्षों के घाव भरना :** अथर्ववेद का कथन है कि वृक्षों में भी विराट् ब्रह्म विद्यमान है, अतः वृक्षों के घाव या काट–छाँट साल भर में भर जाते हैं।

5. **अमर अग्नि की सत्ता वृक्षों में :** ऋग्वेद का कथन है कि अमर अग्नि (चेतनतत्त्व) की सत्ता ओषधियों (वृक्ष–वनस्पतियों) में है।

6. **वृक्ष और मानवशरीर में समानता :** बृहदारण्यक उपनिषद् में मनुष्य के शरीर और वृक्ष दोनों में समानता का बहुत विस्तार से वर्णन करते हुए कहा गया है

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

कि मानवशरीर और वृक्ष में समानता है। मनुष्य के शरीर पर बाल हैं, वृक्षों के पत्ते हैं। दोनों के शरीर पर त्वचा है। त्वचा कटने पर खून निकलता है, वृक्ष का भी त्वचा कटने पर रस निकलता है। मनुष्य के शरीर में मांस है, वृक्ष में रस–स्त्राव (शर्करा) है। मानवशरीर में हड्डी है, वृक्षों में लकड़ी। दोनों में मज्जा है। दोनों के घाव भर जाते हैं।

उपसंहार–

ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद में वृक्ष–वनस्पतियों को उपयोगिता के विषय में विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। वृक्ष मानवमात्र को प्राणवायु (Oxygen) देते हैं, इसलिए वे मानव के रक्षक, पोषक और माता–पिता है। मनुष्य प्राणवायु के बिना जीवित नहीं रह सकता है, अतः वृक्ष, वन, वनस्पतियों और ओषधियों की रक्षक बताया गया है।

वृक्ष–वनस्पति केवल प्राणवायु के ही साधन नहीं है, अपितु उनका पंच–अंग अर्थात् पाँचों अंग उपयोगी हैं। ये पाँच अंग है – 1. मूल (जड़), 2. स्कन्ध, शाखा (तना और शाखाएँ), 3. पत्र (पत्ते), 4. पुष्प (फूल) और 5. फल। काष्ठ की प्राप्ति का एक मात्र साधन वृक्ष है। पत्ते, फूल और फल मानव जाति के आच्छादन, भरण–पोषण, भोज्यपदार्थ, रोगनाशन आदि के द्वारा मानव के लिए सुख–सुविधा के साधन है। ये वातावरण को शुद्ध करते हैं और प्राणिमात्र को आरोग्य प्रदान करते है।

महाभारत शान्तिपर्व में भी बहुत विस्तार से वृक्षों में चेतनता का वर्णन किया गया है। इसमें वर्णन है कि किस प्रकार पाँचों तत्त्वों आकाश, वायु, अग्नि आदि की वृक्षों में सत्ता है और किस प्रकार वृक्ष भी देखते, सूँघते हैं और स्पर्श आदि का अनुभव करते हैं। वृक्षों में रस का संचार (Circulation) होता है, इसका संकेत वैशेषिकदर्शन में मिलता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

ISSN: 2348 – 2605 Impact Factor: 5.659 Volume 9-Issue 4, (October-December 2021)

1. अथर्ववेद एवं गोपथ ब्राह्मण, ब्लूमफील्ड, अनु0 सूर्यकान्त, वाराणसी, 1964

2. अथर्ववेद का सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी, ज्ञानपुर, 1988

3. धर्मशास्त्र का इतिहास, पी0वी0 काणे, अनु0 काश्यप, लखनऊ, 1973

4. पाणिनिकालीन भारतवर्ष, डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल, वाराणसी 1955

5. वेदों में आयुर्वेद, डॉ0 कपिलदेव द्विवेदी, ज्ञानपुर, 2001

6 वेदों में राजनीतिशास्त्र, डॉ0 कपिल द्विवेदी, ज्ञानपुर, 1998

7. वेदों में विज्ञान, डॉ0 कपिल द्विवेदी, ज्ञानपुर, 2000

8. वैदिक कोश, डॉ0 सूर्यकान्त, वाराणसी, 1963

9. वैदिक कोश, भगवद्दत्त, हंसराज, लाहौर, 1926

10. वैदिक पदानुक्रम–कोश, विश्वबन्धु शास्त्री, होशियारपुर, 1960

11. वैदिक अर्थशास्त्र, सातवेलकर पारडी

12. वैदिक वाड्.मय का इतिहास, भगवद्दत्त, लाहौर, 1935

13. वैदिक साहित्य, रामगोविन्द त्रिवेदी, वाराणसी, 1950

14. वैदिक साहित्य और संस्कृति, बलदेव उपाध्याय, वाराणसी, 1958

15. हिन्दू राज्यतंत्र, काशीप्रसाद जायसवाल, वाराणसी, 1955

16 हिन्दू संस्कार, डॉ0 राजबली पांडेय, वाराणसी, 1941

17. हिन्दू सभ्यता, डॉ0 राधाकुमुद मुखर्जी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1958

******